Gmail econtent Of Arts <econtentofarts@gmail.com>

M A (2nd semester)Development of the study of International Relations. Anjani Kumar Ghosh, Political Science.

1 message

ANJANI GHOSH <anjanighosh51@gmail.com> Thu, Jul 9, 2020 at 10:03 AM
To: econtentofarts@gmail.com

अंतरराष्ट्रीय संबंध विभिन्न देशों के बीच संबंधों का अध्ययन है,जो सम्प्रभु राज्यों, अंतर-सरकारी संगठनों , अंतरराष्ट्रीय गैर सरकारी संगठनों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों की भूमिका का अध्ययन करता है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध को कभी-कभी 'अन्तरराष्ट्रीय अध्ययन' के रूप में भी जाना जाता है, हालांकि दोनों शब्द पूरी तरह से पर्याय नहीं हैं।
साधारण शब्दों में 'अंतरराष्ट्रीय राजनीति' का अर्थ है -'राज्यों के मध्य राजनीति करना'। यदि 'राजनीति' के अर्थ का अध्ययन करें तो तीन प्रमुख तत्व सामने आते हैं - (क) समूहों का अस्तित्व; (ख) समूहों के बीच सहमति; तथा (ग) समूहों द्वारा अपने हितों की पूर्ति। इस आशय को यदि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आकलन करें तो ये तीन तत्व मुख्य रूप से - (१) राज्यों का अस्तित्व; (२) राज्यों के बीच संघर्ष; तथा (३) अपने राष्ट्रहितों की पूर्ति हेतु शक्ति का प्रयोग आते हैं । अतः अंतरराष्ट्रीय राजनीति उन क्रियाओं का अध्ययन करना है जिसके अंतर्गत राज्य अपने राष्ट्र हितों की पूर्ति हेतु शक्ति के आधार पर संघर्षरत रहते हैं। इस सन्दर्भ में राष्ट्रीय हित अंतरराष्ट्रीय राजनीति के प्रमुख लक्ष्य होते हैं; संघर्ष इसका दिशा निर्देश तय करती है; तथा शक्ति इस उद्देश्य की प्राप्ति का प्रमुख साधन माना जाता है।

परन्तु उपर्युक्त परिभाषा को हम परम्परागत मान सकते हैं, क्योंकि आज 'अंतरराष्ट्रीय राजनीति' का स्थान इससे व्यापक अवधारणा 'अंतरराष्ट्रीय संबंधों' ने ले लिया है। इसके अंतर्गत राज्यों के परस्पर संघर्ष के साथ-साथ सहयोगात्मक पहलुओं को भी अब अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अंतर्गत अध्ययन किया जाता है। इसके अतिरिक्त आज 'राज्यों' के अलावा अन्य कई कारक भी अब अंतरराष्ट्रीय राजनीति के विषय क्षेत्र बन गए हैं। अतः इसके अंतर्गत आज व्यक्ति, संस्था, संगठन व कई अन्य गैर-राज्य इकाइयाँ भी सम्मिलित हो गई हैं। इसका वर्तमान आधार व विषय क्षेत्र आज काफी व्यापक स्वरूप ले चुका है। इन सभी विषयों पर चर्चा से पहले अलग-अलग विद्वानों द्वारा दी गई निम्न परिभाषाओं की समीक्षा करना आवश्यक है-

परम्परागत परिभाषाएँ -
इन परिभाषाओं का दायरा अति सीमित है, क्योंकि इसके अंतर्गत मूलतः 'राज्यों' को ही अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के कारक के रूप में माना गया है। यह अंतरराष्ट्रीय राजनीति के स्वरूप तक ही सीमित है। मुख्य रूप से हेंस जे. मारगेन्थाऊ, हेराल्ड स्प्राऊट, बोन डॉयक, थाम्पसन आदि इसके मुख्य समर्थक हैं जो इनकी निम्न परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है-

(१) हेंस जे. मारगेन्थाऊ - "अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति शक्ति के लिए संघर्ष है।"
(२) हेराल्ड स्प्राऊट - "स्वतन्त्रा राज्यों के अपने-अपने उद्देश्यों एवं हितों के आपसी विरोध-प्रतिरोध या संघर्ष से उत्पन्न उनकी प्रतिक्रिया एवं संबंधों का अध्ययन अन्तरराष्ट्रीय राजनीति कहलाता है।"
(३) वोन डॉयक- "अंतरराष्ट्रीय राजनीति प्रभुसत्ता सम्पन्न राज्यों की सरकारों के मध्य शक्ति संघर्ष है।"
(४) थाम्पसन- "राष्ट्रों के मध्य प्रारम्भ प्रतिस्पर्धा के साथ-साथ उनके आपसी संबंधों को सुधारने या खराब करने वाली परिस्थितियों एवं समस्याओं का अध्ययन अंतरराष्ट्रीय राजनीति कहलाता है।"
समसामयिक परिभाषाएँ -
नवीन परिभाषाओं में अंतरराष्ट्रीय राजनीति के व्यापक स्वरूप अंतरराष्ट्रीय संबंधों की चर्चा की गई है। इसमें राज्य के अतिरिक्त अंतरराष्ट्रीय राजनीति के नवीन कारकों जैसे अंतरराष्ट्रीय संगठन, देशांतर समूह, गैर सरकारी संगठन, अंतरराष्ट्रीय संस्थायें, कुछ व्यक्तियों आदि को भी सम्मिलित किया गया है। इसके अतिरिक्त इसमें संघर्ष के साथ-साथ सहयोग तथा राजनीति के साथ-साथ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में इसे प्रभावित करने वाले अर्थात, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक, विज्ञान एवं तकनीकि आदि पहलुओं का भी उल्लेख किया गया है। विभिन्न लेखकों की निम्नलिखित परिभाषाओं से यह आशय अति स्पष्ट रूप में उजागर हो जाता है-

(१) नार्मन डी. पामर व होवार्ड सी परकिंस - "अंतरराष्ट्रीय संबंध में राष्ट्र राज्यों, अंतरराष्ट्रीय संगठनों तथा समूहों के परस्पर संबंधों के अतिरिक्त और बहुत कुछ सम्मिलित है। यह विभिन्न स्तर पर पाये जाने वाले अन्य संबंधों का भी समावेश करता है जो राष्ट्र राज्य के ऊपरी व निचले स्तर पर मिलते हैं। परन्तु यह राष्ट्र राज्य को ही अंतरराष्ट्रीय समुदाय का केन्द्र मानता है।"
(२) स्टेनले होफमैन- "अंतरराष्ट्रीय संबंध उन तत्वों एवं गतिविधियों से सम्बन्धित है, जो उन मौलिक ईकाईयों जिनमें विश्व बंटा हुआ है, की

बाह्य नीतियों एवं शक्ति को प्रभावित करता है।"

(३) क्विंसी राइट- "अंतरराष्ट्रीय संबंध केवल राज्यों के संबंधों को ही नियमित नहीं करता अपितु इसमें विभिन्न प्रकार के समूहों जैसे राष्ट्र, राज्य, लोग, गठबंधन, क्षेत्र, परिसंघ, अंतरराष्ट्रीय संगठन, औद्योगिक संगठन, धार्मिक संगठन आदि के अध्ययनों को भी शामिल करना होगा।"

इस प्रकार अंतरराष्ट्रीय राजनीति का स्वरूप प्रारम्भ से वर्तमान तक बहुत व्यापक हो जाता है। इसमें आज राष्ट्र राज्यों के साथ विभिन्न विश्व इकाइयों एवं संगठनों के अध्ययन का समावेश हो चुका है। परन्तु इन सभी परिवर्तनों के बाद भी इन अध्ययनों का केन्द्र बिन्दु आज भी राष्ट्र राज्य ही है।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर अंतरराष्ट्रीय राजनीति के स्वरूप के बारे में निम्न निष्कर्ष सामने आते हैं।

(१) इन परिभाषाओं से एक बात बिल्कुल स्पष्ट रूप से प्रकट होती है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति अभी भी बदलाव के दौर से गुजर रही है। इसके बदलाव की प्रक्रिया अभी स्थाई रूप से स्थापित नहीं हुई है। हालांकि यह अपने विषय क्षेत्र के बारे में आज भी नवीन प्रयोगों एवं विषयों के समावेश से जुड़ी हुई हैं।

(२) एक अन्य बात यह उभर कर आ रही है कि अंतरराष्ट्रीय स्थिति बहुत जटिल है। इसके अध्ययन हेतु बहुआयामी प्रयासों की आवश्यकता होती है।

(३) यह निश्चित है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन का केन्द्र बिन्दु राज्य ही है, परन्तु यह भी काफी हद तक सही है कि इसके अंतर्गत राज्यों के अतिरिक्त विभिन्न संगठनों, समुदायों, संस्थाओं आदि का अध्ययन करना अति अनिवार्य हो गया है।

(४) अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन हेतु विभिन्न स्तरों एवं आयामों का अध्ययन आवश्यक है। अतः इस विषय का अध्ययन अन्ततः अनुशासकीय आधार पर अधिक कुशलतापूर्वक हो सकता है।

(५) इसके अध्ययन हेतु नवीन दृष्टिकोणों की उत्पत्ति हो रही है। जैसे-जैसे अंतरराष्ट्रीय राजनीति में बदलाव आता है उसके अध्ययन एवं सामान्यीकरण हेतु नये उपागमों की आवश्यकता होती है। उदाहरणस्वरूप, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जहां यथार्थवाद, व्यवस्थावादी, क्रीड़ा, सौदेबाजी, तथा निर्णयपरक उपागमों की उत्त्पत्ति हुई, उसी प्रकार अब उत्तर शीतयुद्ध युग में उत्तर आधुनिकरण, विश्व व्यवस्था, क्रिटिकल सिद्धान्त आदि की उत्पत्ति हुई। भावी विश्व में भी वैश्वीकरण व इससे जुड़े मुद्दों पर नये उपागमों के कार्यरत होने की व्यापक सम्भावनाएँ हैं।

अतः अंतरराष्ट्रीय राजनीति का स्वरूप परिवर्तनशील है। जब-जब अंतरराष्ट्रीय राजनीति के परिवेश, कारकों व घटनाक्रम में परिवर्तन आयेगा, इसके अध्ययन करने के तरीकों व दृष्टिकोणों में भी परिवर्तन अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, यह परिवर्तन स्थाई न होकर निरन्तर है। इसके साथ-साथ विभिन्न कारकों, स्तरों, आयामों आदि के कारण यह बहुत जटिल है अतः इसके सुचारू अध्ययन हेतु बहुत स्पष्ट, तर्कसंगत, व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है

जैसा उपर्युक्त परिभाषाओं एवं स्वरूप से ज्ञात है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति का विषय क्षेत्र बढ़ता ही जा रहा है। आज इसका विषय क्षेत्र काफी व्यापक हो गया है जिसके अंतर्गत निम्नलिखित बातों का अध्ययन किया जाता है-

(१) अंतरराष्ट्रीय राजनीति के विषय में विभिन्न बदलाव के बाद भी आज भी इसका मुख्य केन्द्र बिन्दु राज्य ही है। मूलतः अंतरराष्ट्रीय राजनीति राज्यों के मध्य अन्तःक्रियाओं पर ही आधारित होती है। प्रत्येक राज्यों को अपने राष्ट्र हितों की पूर्ति हेतु अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की सीमाओं में रह कर ही कार्य करने पड़ते हैं। परन्तु इन कार्यों के करने हेतु विभिन्न राज्यों में संघर्षात्मक व सहयोगात्मक दोनों ही प्रकार की प्रतिक्रियाएँ होती है। इन्हीं प्रतिक्रियाओं, इनसे जुड़े अन्य पहलुओं का अध्ययन ही अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन की प्रमुख सामग्री होती है।

(२) अंतरराष्ट्रीय राजनीति का दूसरा महत्त्वपूर्ण कारक शक्ति का अध्ययन है। द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत कई दशकों तक विशेषकर शीतयुद्ध काल में, यह माना गया कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति का प्रमुख उद्देश्य शक्ति संघर्षों का अध्ययन करना मात्रा ही है। यथार्थवादी लेखक, विशेषकर मारगेन्थाऊ, तो इस निष्कर्ष को अति महत्त्वपूर्ण मानते हैं कि "अंतरराष्ट्रीय राजनीति केवल राज्यों के बीच शक्ति हेतु संघर्ष" है। वे 'शक्ति' को ही एक मात्र कारण मानते हैं जिस पर सम्पूर्ण अंतरराष्ट्रीय राजनीति अथवा परस्पर राज्यों के संबंधों की नींव टिकी है। परन्तु पूर्ण रूप से यह सत्य नहीं है। शायद इसीलिए हम देखते हैं कि शीतयुद्धोत्तर युग में शक्ति संघर्ष के साथ-साथ आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक आदि संबंध भी उतने ही महत्त्वपूर्ण बन गये हैं। हां इस तथ्य को भी पूर्ण रूप से नहीं नकार सकते कि शक्ति आज भी अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण कारक है।

(३) अंतरराष्ट्रीय राजनीति का एक अन्य कारक अंतरराष्ट्रीय संगठनों का अध्ययन भी है। आधुनिक युग राज्यों के बीच बहुपक्षीय संबंधों का युग है। राज्यों के इन बहुपक्षीय संबंधों के संचालन में अंतरराष्ट्रीय संगठनों की भूमिका महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। ये अंतरराष्ट्रीय संगठन राज्यों के मध्य आर्थिक, सामाजिक, भौगोलिक, सैन्य, सांस्कृतिक आदि क्षैत्रों में सहयोग के मार्ग प्रस्तुत करते हैं। वर्तमान सन्दर्भ में संयुक्त राष्ट्र के अतिरिक्त विभिन्न अंतरराष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय सन्गठन अंतरष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन का प्रमुख हिस्सा बन गए हैं।

(४) युद्ध व शान्ति की गतिविधियों का अध्ययन भी आज अंतरराष्ट्रीय राजनीति का अभिन्न अंग बन गया है। यह सत्य है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति न तो पूर्ण रूप से सहयोग तथा न ही पूर्ण रूप से संघर्षों पर आधारित है। अतः मतभेद व सहमति अंतरराष्ट्रीय राजनीति के सहचर

हैं। इन दोनों की उपस्थिति का अर्थ है यहां युद्ध व शान्ति दोनों की प्रक्रियाएँ विद्यमान हैं। विभिन्न मुद्दों पर आज भी राष्ट्रों के मध्य युद्ध के विकल्प को नहीं त्यागा है। शीतयुद्ध के साथ-साथ राज्यों के बीच प्रत्यक्ष युद्ध आज भी हो रहे हैं। बल्कि वर्तमान विज्ञान के विकास व हथियारों के अति आधुनिकतम रूप के कारण आज युद्ध और भी भयानक हो गए हैं। युद्ध आज प्रारम्भ होने पर दो राष्ट्रों के लिए भी घातक नहीं, अपितु, सम्पूर्ण मानवता का विनाश भी कर सकते हैं। इसीलिए युद्धों को रोकने हेतु शान्ति प्रयासों पर भी अत्यधिक बल दिया जाता है। इसीलिए इन युद्ध व शान्ति के पहलुओं का अध्ययन करना ही अंतरराष्ट्रीय राजनीति का प्रमुख भाग बन गया है।

(५) अंतरराष्ट्रीय राजनीति वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से राज्य अपने राष्ट्रीय हितों का संवर्धन एवं अभिव्यक्ति करते हैं। यह प्रक्रिया केवल एक समय की न होकर निरन्तर चलती रहती है। इस प्रक्रिया का प्रकटीकरण राज्यों की विदेश नीतियों के माध्यम से होता है। अतः अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन में विदेशी नीतियों का आकलन एक अभिन्न अंग बन गया है। इसके अतिरिक्त, राज्यों की इन विदेश नीतियों के स्वरूप से ही अंतरराष्ट्रीय राजनीति के स्वरूप में भी बदलाव आता है। इन्हीं के कारण विश्व में शांति व सहयोग अथवा युद्ध की परिस्थितियों को जन्म मिलता है। न केवल वर्तमान बल्कि भावी अंतरराष्ट्रीय राजनीति का स्वरूप भी इन्हीं राज्यों के आपसी संबंधों की प्रगाढ़ता एवं तनाव पर निर्भर करता है। अतः विभिन्न विदेश नीतियों अध्ययन व आंकलन भी अंतरराष्ट्रीय राजनीति का महत्त्वपूर्ण विषय क्षेत्र है।

(६) राष्ट्रों के मध्य सुचारू, सुसंगठित एवं सुस्पष्ट संबंधों के विकास हेतु कुछ नियमावली का होना अति आवश्यक होता है। अतः राज्यों के परस्पर व्यवहार को नियमित करने हेतु अंतरराष्ट्रीय कानूनों की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, अंतरराष्ट्रीय राजनीति के सुचारू स्वरूप एवं भविष्य के दिशा निर्देश हेतु भी इनकी आवश्यकता होती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर युद्धों को रोकने, शान्ति स्थापित करने, हथियारों की होड़ रोकने, संसाधनों का अत्यधिक दोहन न करने, भूमि, समुद्र व आन्तरिक को सुव्यवस्थित रखने आदि विभिन्न विषयों पर राज्यों की गतिविधियों को सुचारू करने हेतु भी अंतरराष्ट्रीय विधि का होना आवश्यक है। अतः अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन हेतु अंतरराष्ट्रीय कानूनों का समावेश भी आवश्यक हो गया है।

(७) राज्यों की गतिविधियों में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक मुद्दों का अध्ययन भी काफी महत्त्वपूर्ण रहा है। परन्तु शीतयुद्ध के संघर्षों के कारण 1945-91 तक राजनीतिक मुद्दे ज्यादा अग्रणीय रहे तथा आर्थिक मुद्दे अति महत्त्वपूर्ण हो गए है। तथा राजनीतिक मुद्दे गौण हो गए हैं। वर्तमान भूमण्डलीकरण के दौर में ज्यादातर राज्य आर्थिक सुधारों, उदारवाद, मुक्त व्यापार आदि के दौर से गुजर रहे है। ऐसी स्थिति में आर्थिक गतिविधियों का अध्ययन अति महत्त्वपूर्ण हो गया है। आज संयुक्त राष्ट्र की राजनीतिक ईकाइयों की बजाय विश्व व्यापार संगठन, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक आदि अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हो गए हैं। अब राजनीतिक विचारधाराओं के स्थान पर नए अंतरराष्ट्रीय अर्थव्यस्था, उत्तर दक्षिण संवाद, विकासशील देशों में कर्ज की समस्या, व्यापार में भुगतान संतुलन, बाह्य पूंजीनिवेश, संयुक्त उद्यम, आर्थिक सहायता आदि विषय अत्यधिक महत्व के हो गए हैं। अतः अंतरराष्ट्रीय राजनीति में इन आर्थिक संस्थाओं, संगठनों व कारकों का अध्ययन करना अनिवार्य हो गया हैं

(८) अंतरराष्ट्रीय राजनीति के वर्तमान स्वरूप से यह स्पष्ट है कि अब इस विषय के अंतर्गत राज्यों के अतिरिक्त गैर सरकारी संगठनों की भूमिकाएं भी महत्त्वपूर्ण होती जा रही हैं। दूसरी अंतरराष्ट्रीय राजनीति के बढ़ते विषय क्षेत्र के साथ-साथ इसमें कार्यरत संस्थाओं एवं संगठनों का विकास भी हो रहा है। तीसरे, अब अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अंतर्गत कई महत्त्वपूर्ण मुद्दे भी आ रहे हैं, जो मानवता हेतु ध्यानाकर्षण योग्य बन गए हैं। इन सभी कारणों से अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन का दायरा भी विकसित होता जा रहा है। आज इसमें राजनीतिक ही नहीं बल्कि गैर-राजनीतिक विषय जैसे पर्यावरण, नारीवाद, मानवाधिकार, ओजोन परत क्षीण होना, मादक द्रवों की तस्करी, गैर कानूनी व्यापार, शरणार्थियों व विस्थापितों की समस्याएँ आदि भी महत्त्वपूर्ण हिस्सा बनते जा रहे हैं। इसके साथ-साथ गैर-सरकारी संस्थानों (एन.जी.ओ.) की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण होती जा रही है। विभिन्न स्तरों पर राज्यों के विभिन्न मुद्दों से जुड़े कई स्थानिय या क्षेत्रय संगठन भी आज अंतरराष्ट्रीय राजनीति को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। अतः अंतरराष्ट्रीय राजनीति के दायरे में मात्रा परंपरागत विषय क्षेत्र तक सीमित न रहकर समसामयिक विषयों को भी सम्मिलित कर लिया है। इसीलिए इन सभी समस्याओं, संगठनों, पहलुओं आदि का अध्ययन भी आज अंतरराष्ट्रीय राजनीति में महत्त्वपूर्ण हो गया है।

अतः अंतरराष्ट्रीय राजनीति का विषय क्षेत्र आज बहुत व्यापक व जटिल होने के साथ-साथ विकास की ओर अग्रसर है। इसके अंतर्गत विभिन्न परम्परागत कारकों के साथ-साथ गैर-परम्परागत कारकों का अध्ययन भी महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है।

अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्ध के विकास के चरण -

अंतरराष्ट्रीय राजनीति के विकास का इतिहास ज्यादा प्राचीन नहीं है, बल्कि यह विषय बीसवीं शताब्दी की उपज है। स्पष्ट रूप से देखा जाए तो वेल्ज विश्वविद्यालय में अंतरराष्ट्रीय वुडरो विल्सन पीठ की 1919 में स्थापना से ही इसका इतिहास प्रारम्भ होता है। इस पीठ पर प्रथम आसीन होने वाले प्रसिद्ध इतिहासकार प्रोफेसर ऐल्फर्ड जिमर्न थे तथा बाद में अन्य प्रमुख विद्धान जिन्होंने इस पीठ को सुशोभित किया उनमें से प्रमुख थे - सी.के. वेबस्टर, ई.एच.कार, पी.ए. रेनाल्ड, लारेंस डब्लू, माटिन, टी.ई. ईवानज आदि। इसी समय अन्य विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में भी इसी प्रकार की व्यवस्थाएं देखने को मिली। अतः पिछली एक शताब्दी के इस विषय के इतिहास पर दृष्टिपात करें तो इस विषय में आये उतार-चढ़ाव के साथ-साथ इसके एक स्वायत्त विषय में स्थापित होने के बारे में जानकारी मिलती है। इस विषय में आये बहुआयामी परिवर्तनों ने जहां एक ओर विषयवस्तु का संवर्धन, समन्वय तथा विकास किया है, वहीं दूसरी ओर विभिन्न सिद्धान्तों का

प्रतिपादन करके बहुत सी जटिल समस्याओं एवं पहलुओं को समझने में सहायता प्रदान की है।

केनेथ थाम्पसन ने सन् 1962 के 'रिव्यू ऑफ पॉलिटिक्स' में प्रकाशित अपने लेख में अंतरराष्ट्रीय राजनीति के इतिहास को चार भागों में बांटा है, जिसके आधार पर इस विषय का सुस्पष्ट एवं सुनिश्चित अध्ययन सम्भव हो सकता है। विकास के इन चार चरणों में शीतयुद्धोत्तर युग के पांचवें चरण को भी सम्मिलित किया जा सकता है। इनका विस्तृत वर्णन निम्न प्रकार से है-

(१) कूटनीतिक इतिहास का प्रभुत्व, (प्रारम्भ से 1919 तक)
(२) सामयिक घटनाओं/समस्याओं का अध्ययन, (1919 - 1939)
(३) राजनीतिक सुधारवाद का युग, (1939 - 1945)
(४) सैद्धान्तिकरण के प्रति आग्रह, (1945 - 1991)
(५) वैश्वीकरण व गैर-सैद्धान्तीकरण का युग, (1991 - 2003)
कूटनीतिक इतिहास का प्रभुत्व संपादित करें
प्रथम विश्वयुद्ध से पूर्व इतिहास, कानून, राजनीति शास्त्र, दर्शन शास्त्र आदि के विद्वान ही अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अलग-अलग पहलुओं पर विचार करते थे। मुख्य रूप से इतिहासकार ही इसका अध्ययन राजनयिक इतिहास तथा अन्य देशों के साथ संबंधों के इतिहास के रूप में करते थे। इसके अंतर्गत कूटनीतिज्ञों व विदेश मन्त्रियों द्वारा किए गए कार्यों का लेखा जोखा होता था। अतः इसे कूटनीतिक इतिहास की संज्ञा भी दी जाती है। ई.एच.कार के अनुसार प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व युद्ध का संबंध केवल सैनिकों तक समझा जाता था तथा इसके समकक्ष अंतरराष्ट्रीय राजनीति का संबंध राजनयिकों तक। इसके अतिरिक्त, प्रजातांत्रिक देशों में भी परम्परागत रूप से विदेश नीति को दलगत राजनीति से अलग रखा जाता था तथा चुने हुए अंग भी अपने आपको विदेशी मन्त्रालय पर अंकुश रखने में असमर्थ महसूस करते थे। 1919 से पूर्व इस विषय के प्रति उदासीनता के कई प्रमुख कारण थे - प्रथम, इस समय तक यही समझा जाता था कि युद्ध व राज्यों में गठबंधन उसी प्रकार स्वाभाविक है जैसे गरीबी व बेरोजगारी। अतः युद्ध, विदेश नीति एवं राज्यों के मध्य परस्पर संबंधों को रोक पाना मानवीय सामर्थ्य के वश से बाहर माना जाता था। द्वितीय, प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व युद्ध इतने भयंकर नहीं होते थे। तृतीय, संचार साधनों के अभाव में अंतरराष्ट्रीय राजनीति कुछ गिने चुने राज्यों तक ही सीमित थी।

इस प्रकार इस युग में अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन की सबसे बड़ी कमी सामान्य हितों का विकास रहा। इस काल में केवल राजनयिक इतिहास का वर्णनात्मक अध्ययन मात्रा ही हुआ। परिणामस्वरूप, इससे न तो वर्तमान तथा न ही भावी अंतरराष्ट्रीय राजनीति को समझने में कोई मदद मिली। इस युग की मात्रा उपलब्धि 1919 में वेल्स विश्वविद्यालय में अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन के पीठ की स्थापना रही।

सामयिक घटनाओं,समस्याओं का अध्ययन -
दो विश्व युद्धों के बीच के काल में दो समानान्तर धाराओं का विकास हुआ। जिनमें से प्रथम के अंतर्गत पूर्व ऐतिहासिकता के प्रति प्रभुत्व को छोड़कर सामयिक घटनाओं/समस्याओं के अध्ययन पर अधिक बल दिया जाने लगा। इसके साथ साथ अब ऐतिहासिक राजनीतिक अध्ययन को वर्तमान राजनीतिक सन्दर्भों के साथ जोड़ कर देखने का प्रयास भी किया गया। ऐतिहासिक प्रभाव के कम होने के बाद भी अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन हेतु एक समग्र दृष्टिकोण का अभाव अभी भी बना रहा। इस काल में वर्तमान के अध्ययन पर तो बहुत बल दिया गया, लेकिन वर्तमान एवं अतीत के पारस्परिक संबंध के महत्व को अभी भी पहचाना नहीं गया। इसके अतिरिक्त, न ही युद्धोत्तर राजनीतिक समस्याओं को अतीत की तुलनीय समस्याओं के साथ रखकर देखने का प्रयास ही किया गया।

शायद इसीलिए इस युग में भी दो मूलभूत कमियाँ स्पष्ट रूप से उजागर रहीं। प्रथम, पहले चरण की ही भांति इस काल में भी अंतरराष्ट्रीय राजनीति में सार्वभौमिक सिद्धान्त का विकास नहीं हो सका। द्वितीय, आज भी अंतरराष्ट्रीय राजनीति का अध्ययन अधिक सुस्पष्ट एवं तर्कसंगत नहीं बन पाया। इस प्रकार इस चरण में अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन में बल देने की स्थिति में बदलाव के अतिरिक्त बहुत ज्यादा परिवर्तन देखने को नहीं मिला तथा न ही इस विषय के स्पष्ट रूप से स्वतन्त्रा अनुशासन बनने की पुष्टि हुई।

राजनैतिक सुधारवाद का युग संपादित -
अंतरराष्ट्रीय राजनीति के विकास का तृतीय चरण भी द्वितीय चरण के समानान्तर दो विश्व युद्धों के बीच का काल रहा। इसे सुधारवाद का युग इसलिए कहा जाता है कि इसमें राज्यों द्वारा राष्ट्र संघ की स्थापना के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय राजनीति में सुधार की कल्पना की गई। इस युग में मुख्य रूप से संस्थागत विकास किया गया। इस काल के विद्वानों, राजनयिकों, राजनेताओं व चिन्तकों का मानना था कि यदि अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं का विकास हो जाता है तो विश्व समुदाय के सम्मुख उपस्थित युद्ध व शांति की समस्याओं का समाधान सम्भव हो सकेगा। इस उद्देश्य हेतु कुछ कानूनी व नैतिक उपागमों की संरचनाएं की गई जिनके निम्न मुख्य आधार थे।

(क) शान्ति स्थापित करना सभी राष्ट्रों का सांझा हित है, अतः राज्यों को हथियारों का प्रयोग त्याग देना चाहिए।

(ख) अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी कानून व व्यवस्था के माध्यम से झगड़ों को निपटाया जा सकता है।
(ग) राष्ट्र की तरह, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी, कानून के माध्यम से अनुचित शक्ति प्रयोग को प्रतिबंधित किया जा सकता है।
(घ) राज्यों की सीमा परिवर्तन का कार्य भी कानून या बातचीत द्वारा हल किया जा सकता है।
इन्हीं आदर्शिक एवं नैतिक मूल्यों पर बल देते हुए अंतरराष्ट्रीय संगठन (राष्ट्र संघ) की परिकल्पना की गई। इसकी स्थापना के उपरान्त यह माना गया कि अब अंतरराष्ट्रीय संबंधों में राज्यों के मध्य शान्ति बनाने का संघर्ष समाप्त हो गया। नई व्यवस्था के अंतर्गत शक्ति संतुलन का कोई स्थान नहीं होगा। अब राज्य अपने विवादों का निपटारा संघ के माध्यम से करेंगे। अतः इस युग में न केवल युद्ध व शान्ति की समस्याओं का विवेचन किया, अपितु इसके दूरगामी सुधारों के बारे में भी सोचा गया। अतः अध्ययनकर्ताओं के मुख्य बिन्दु भी कानूनी समस्याओं व संगठनों के विकास के साथ-साथ इनके माध्यम से अंतरराष्ट्रीय राजनीति के स्वरूप को बदलने वाला रहा। अन्ततः इस काल में भावात्मक, कल्पनाशील व नैतिक सुधारवाद पर अधिक बल दिया गया है।

परन्तु विश्वयुद्धों के बीच इन उपागमों की सार्थकता पर हमेशा प्रश्न चिह्न लगा रहा। राष्ट्र संघ की प्रथम एक दशक (1919-1929) की गतिविधियों से जहां आशा की किरण दिखाई दी, वहीं दूसरे दशक (1929-1939) की यर्थाथवादी स्थिति ने इस धारणा को बिल्कुल समाप्त कर दिया। बड़ी शक्तियों के मध्य असहयोग व गुटबन्दियों ने शान्ति की स्थापना की बजाय शक्ति संघर्ष व्यवस्था को जन्म दिया। जापान ने मंचूरिया पर हमले करके जहां शांति को भंग कर दिया वहीं इटली, जर्मनी व रूस ने भी विवादास्पद स्थितियों में न केवल राष्ट्र संघ की सदस्यता ही छोड़ी, बल्कि द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रारम्भ होने की प्रक्रिया को और तीव्र बना दिया। इस प्रकार शान्ति, नैतिकता, व कानून से विश्व व्यवस्था नहीं चल सकी, तो ई.एच.कार, शुंभा, क्विंसी राईट आदि लेखकों के कारण यथार्थवादी दृष्टिकोण को वैकल्पिक उपागम के रूप में बल मिला।

सैद्धान्तीकरण के प्रति आग्रह -
इस चरण में अंतरराष्ट्रीय राजनीति में मूलभूत परिवर्तनों से न केवल इसकी विषयवस्तु व्यापक हुई बल्कि इसमें बहुत जटिलताएँ भी पैदा हो गई। शीतयुगीन काल में राजनीति के स्वरूप में परिवर्तन तथा नये राज्यों के उदय ने सम्पूर्ण अंतरराष्ट्रीय परिवेश को ही बदल दिया। परिणामस्वरूप नये उपागमों, आयामों, संस्थाओं व प्रवृत्तियों का सर्जन हुआ जिनके माध्यम से अंतरराष्ट्रीय संबंधों का अध्ययन सुनिश्चित हो गया।

पूर्व चरणों की आदर्शिक, संस्थागत, नैतिक, कानूनी एवं सुधारवादी धाराओं की असफलताओं ने नये उपागमों के विकास की ओर अग्रसर किया। यह नया उपगम था-यथार्थवाद। वैसे तो ई.एच.कार, श्वार्जनबर्जर, क्विंसी राईट, शुभां आदि लेखकों ने इस दृष्टिकोण को विकसित किया, परन्तु हेंस जे. मारगेन्थाऊ ने इसे एक सामान्य सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत किया। इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य हमेशा अपने हितों की पूर्ति हेतु संघर्षरत रहते हैं। अतः अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को समझने हेतु इस शक्ति संघर्ष के विभिन्न आयामों को समझना अति आवश्यक है।

यथार्थवादी दृष्टिकोण के साथ अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के सुनिश्चित व सुस्पष्ट विकास के रूप में अंतरराष्ट्रीय संगठन (संयुक्त राष्ट्र संघ) की भी उत्पत्ति हुई। अब इस संगठन का स्वरूप मात्रा आदर्शवादी व सुधारवादी न होकर, महत्त्वपूर्ण राजनीतिक संगठन के रूप में उभर कर आया। इसके अंतर्गत मानवजाति को युद्ध की विभीषिका से बचाने के साथ-साथ राज्यों के मध्य संघर्ष के कौन-कौन से कारण हैं? विश्वशांति हेतु खतरे के कौन-कौन से कारक हैं? शांति की स्थापना कैसे हो सकती है? शस्त्रों की होड़ को कैसे रोका जा सकता है? आदि कई प्रकार के प्रश्नों का समाधान ढूंढने के प्रयास भी किए गए।

उपरोक्त दो प्रवृत्तियों के साथ-साथ व्यवहारवाद की उत्पत्ति भी इस युग की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि रही। व्यवहारवादी दृष्टिकोण के माध्यम से "व्यवस्था सिद्धान्त" की उत्पत्ति कर अंतरराष्ट्रीय राजनीति को समझने का प्रयास किया गया। इस उपागम के अंतर्गत राज्यों के अध्ययन हेतु तीन प्रमुख कारकों का अध्ययन किया जाना ज़रूरी माना गया। ये कारक थे-

(क) विभिन्न देशों की विदेश नीतियों को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन;
(ख) विदेश नीति संचालन की पद्धतियों का अध्ययन;
(ग) अंतरराष्ट्रीय विवादों और समस्याओं के समाधान के उपायों का अध्ययन।
उपरोक्त प्रवृतियों का मुख्य बल अंतरराष्ट्रीय राजनीति मैं सैद्धान्तिकरण को बढ़ावा देना रहा है। अतः इस युग में अंतरराष्ट्रीय राजनीति के सार्वभौमिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना अति महत्त्वपूर्ण कार्य रहा है। सिद्धान्त निर्माण की इस प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप अनेक आंशिक सिद्धान्तों जैसे - यथार्थवाद, संतुलन का सिद्धान्त, संचार सिद्धान्त, क्रीड़ा सिद्धान्त, सौदेबाजी का सिद्धान्त, शान्ति अनुसन्धान दृष्टिकोण, व्यवस्था सिद्धान्त, विश्व व्यवस्था प्रतिमान आदि का निर्माण हुआ। इन सिद्धान्तों के प्रतिपादन के बावजूद इस युग में किसी एक सार्वभौमिक व सामान्य सिद्धान्त का अभाव अभी भी बना रहा। 1990 के दशक में जयन्त बंधोपाध्याय ने अपनी पुस्तक - जनरल थ्योरी ऑफ इंटरनेशनल रिलेसन्स (1993) - में मार्टिन कापलान के व्यवस्थापरक सिद्धान्त की कमियों को दूर कर एक सार्वभौमिक

सिद्धान्त की स्थापना की कोशिश की है, परन्तु वह भी अभी वाद-प्रतिवाद के दौर में ही हैं। अतः सैद्धान्तिकरण के मुख्य दौर के बावजूद शीतयुद्ध कालीन युग अपनी वैचारिक संकीर्णता व अलगाव के कारण किसी एक सामान्य सिद्धान्त के प्रतिपादन से वंचित रहा।

वैश्वीकरण व गैर-सैद्धान्तीकरण का युग -

शीतयुद्धोत्तर युग में सभी राष्ट्रों द्वारा एक आर्थिक व्यवस्था के अंतर्गत जुड़ना प्रारम्भ कर दिया। इसीलिए अब वैश्वीकरण, उदारीकरण, मुक्त बाजार व्यवस्था आदि का दौर प्रारम्भ हो गया। इस सन्दर्भ में न केवल आर्थिक मुद्दों का ही महत्व बढ़ा, अपितु अंतरराष्ट्रीय राजनीति का महत्व और भी बढ़ गया। आज राष्ट्रीयता एवं अंतरराष्ट्रीयता का विभेद समाप्त हो गया इसके अतिरिक्त, अब अंतरराष्ट्रीय राजनीति की विषय सूची में काफी नवीन विषयों का समावेश हो गया जो राष्ट्रीय न रहकर अब मानवजाति की समस्याओं के रूप में उभर कर आये। वर्तमान विश्व की प्रमुख समस्याओं में आतंकवाद, पर्यावरण, ओजोन परत क्षीण होना, नशीले पदार्थों एवं मादक द्रव्यों की तस्करी, मानवाधिकारों का हनन आदि प्रमुख मुद्दे उभर कर सामने आये जिनका राष्ट्रीय स्तर या क्षेत्रय स्तर की बजाय अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हल निकालना अनिवार्य बन गया है।

सैद्धान्तिक स्तर पर भी 1945 से 1991 तक के सार्वभौमिक सिद्धान्त की स्थापना के प्रयास को धक्का लगा। अंतरराष्ट्रीय राजनीति की इस सन्दर्भ में अब प्राथमिकताएं बदल गई। उत्तर-आधुनिकतावाद में (पोस्ट मोडर्निज्म) अब सार्वभौमिक सिद्धान्तों की सार्थकता पर प्रश्न चिह्न लग रहे हैं। ऐतिहासिक सन्दर्भ एवं प्राचीन परिवेश के प्रभाव को भी नकारा जा रहा है। अब स्वतन्त्र मुद्दे अधिक महत्त्वपूर्ण हो गए हैं। वृहत् सिद्धान्त गौण हो गए हैं। नए सन्दर्भ में आंशिक शोध अधिक महत्त्वपूर्ण बन गई है। उदाहरणस्वरूप नारीवाद, मानवाधिकार, पर्यावरण आदि विषयों पर अधिक बल देने के साथ-साथ चिन्तन भी प्रारम्भ हो गया है। अतः शीतयुद्धोत्तर युग में अंतरराष्ट्रीय राजनीति का स्वरूप, विषय सूची एवं विषय क्षेत्र पूर्ण रूप से परिवर्तित हो गए हैं। अब सामान्य सैद्धान्तिक स्थापना पर भी अधिक बल नहीं दिया जा रहा है। इसीलिए इस बदले हुए परिवेश में अंतरराष्ट्रीय राजनीति महत्त्वपूर्ण ही नहीं, अपितु स्वायत्तता की ओर अग्रसर प्रतीत हो रही है। और विषय की स्वायत्तता हेतु आशावादी संकेत दिखाई देते हैं।